International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शुक्लयजुर्वेदीय उपनिषदों में ब्रह्म का स्वरूप

डॉ0 सुभाष चन्द्र गुप्ता
प्रोफ़ेसर एवं विभागाध्यक्ष संस्कृत
उप अधिष्ठाता, मानविकी संकाय,
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,

इन्दु बाला
शोध छात्रा संस्कृत विभाग
बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय,
रोहतक (हरियाणा)

उपनिषदों के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विचार हैं कि जिनकी आधारशिला पर औपनिषादिक दार्शनिक भवन खड़ा हुआ है। इस प्रकार के विचारों में ब्रह्म मुख्य तत्त्व है जिनके चारों ओर सभी दर्शनशास्त्रियों ने अपने–अपने विचारों का ताना–बाना बुना है।

भूमिका

उपनिषद् शब्द की उत्पत्ति 'उप' व 'नि' उपसर्गपूर्वक षदलृ (सद्) धातु से हुई है। सद् धातु के तीन अर्थ हैं – विशरण, गति व अवसादन। जिसके माध्यम से ब्रह्म की समीपता निश्चय रूप से प्राप्त हो, उसे उपनिषद् कहा जाता है। उपनिषदों की संख्या के विषय में भी प्रायः काफी मतभेद पाया गया है। मूलरूप से शंकराचार्य ने दस उपनिषदों पर अपना भाष्य लिखा है और उन्हें ही प्रामाणिक माना गया है।

उपनिषदों में मुख्य तौर पर आत्मा, परमात्मा, ब्रह्म, मोक्ष, पुनर्जन्म, परलोकवाद आदि विषयों पर विचार प्रस्तुत किए गए हैं। मुख्य रूप से सभी उपनिषदों में ब्रह्म का वर्णन किया गया है।

अतः प्रस्तुत इस शोध–प्रबन्ध में शुक्लयजुर्वेदीय उपनिषदों में ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन किया गया है क्योंकि सभी उपनिषदों में ब्रह्म को प्रमुख विषय माना गया है।

उपनिषद् साहित्य में कहा गया है कि 'गद्यात्मको यजु' अर्थात् गद्यमयी वैदिक रचना का नाम ही यजुर्वेद है। दूसरे शब्दों में कहा गया है कि 'अनियताक्षरावसानो यजुः' अर्थात् जिसमें अक्षरों की संख्या, अनियत व अनिश्चित हो, वह यजुः है। महाभाष्यकार पतंजलि ने यजुर्वेद की एक सौ एक शाखाओं का उल्लेख करते हुए कहा है – 'एकशतमध्वर्युशाखाः'। ये शाखाएँ शुक्लयजुर्वेद व कृष्णयजुर्वेद दोनों की मिलाकर है।

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शुक्लयजुर्वेद – शुक्लयजुर्वेद आदित्य सम्प्रदाय का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें यज्ञ में प्रयोग किए जाने वाले मंत्रों का संकलन है। विशुद्धता की दृष्टि के कारण ही इसे शुक्ल कहा गया है। इसकी प्राप्ति सूर्य से होने के कारण भी इसे शुक्ल कहा गया है। शुक्लयजुर्वेद प्रायः स्पष्ट है, विषय की दृष्टि से निर्मल है, यह पाठक की बुद्धि को चमत्कृत करके विषय की ओर आकर्षित करता है।

शुक्लयजुर्वेद के अन्तर्गत दो उपनिषदों का वर्णन किया गया है –

1. ईशावास्योपनिषद्
2. बृहदारण्यकोपनिषद्

ईशावास्योपनिषद् को उपनिषद् भवन की आधारशिला कह सकते हैं। इस उपनिषद् में जो शिक्षाएँ दी गई हैं उन्हें वेद व उपनिषदों की शिक्षा का सार कह सकते हैं। ईशावास्योपनिषद् यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय है। बृहदारण्यकोपनिषद् सबसे बृहत् उपनिषद् है। यह केवल आकार की दृष्टि से ही नहीं अर्थ की दृष्टि से भी बृहत् है।

ब्रह्म शब्द की व्युत्पत्ति बृह् धातु से हुई है, जिसका अर्थ है प्रस्फुटित होना, विशाल, प्रसरण, बढ़ना इत्यादि।[1] बृह धातु से वृद्धि के अर्थ में भी ब्रह्मन् शब्द निष्पन्न होता है।[2] शब्द कल्पद्रुम में भी ब्रह्म शब्द का यही अर्थ किया गया है।[3]ऋग्वेद में भी बृह धातु से ब्रह्म शब्द का अर्थ किया गया है।[4]मोनियर विलियम शब्दकोष के अनुसार ब्रह्म का अर्थ है – वृद्धि, विस्तार, विकास, प्रगति व आत्मा का उत्कर्ष।[5] पाल डयूसन ने भी ब्रह्म का सम्बद्ध प्रार्थना शब्द से कहा है।[6] अतः ब्रह्म शब्द का अर्थ व्यापक है।

---

1 हिन्दु धर्म कोश, पृ0 450

2 संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ, पृ0 835

3 बृहत्वाद बृहणत्वाद्वात्मैव ब्रह्मेति गीयते। शब्द कल्पद्रुम तृतीय भाग, पृ0 442–443

4 ब्रह्म च तो जातवेदो नमश्च। ऋग्वेद सं0 10.4.7

5 मो0नि0 कोष, पृ0 737

6 आऊटलाईन्स ऑफ इण्डियन फिलॉसफी, पृ0 197

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ईशावास्योपनिषद् में ब्रह्म का स्वरूप – इस उपनिषद् के शान्ति पाठ में ही ब्रह्म की पूर्णता, सत्यता व व्यापकता का वर्णन किया गया है। वह परब्रह्म पुरुषोत्तम सर्वदा परिपूर्ण है और यह सम्पूर्ण जगत् भी उस ब्रह्म से ही पूर्ण है अर्थात् इस समस्त संसार की उत्पत्ति ब्रह्म के कारण ही है। इस समस्त संसार की पूर्णता को अपने में लीन करके पूर्ण ब्रह्म ही शेष रहता है।[7] अतः इस समस्त विश्व की पूर्णता ब्रह्म के ही अधीन है।

ब्रह्म अचल व एक है – ईशावास्योपनिषद् के अनुसार वह सर्वान्तर्यामी सर्वशक्तिमान, परब्रह्म परमेश्वर अचल व एकस्वरूप हैं तथा मन से भी अधिक तेज गति वाला है अर्थात् जहाँ तक मन की पहुँच होती है, वह ब्रह्म उससे भी अधिक तेज गति वाला है अर्थात् वह ब्रह्म उस स्थान पर पहले से ही विद्यमान रहता है। मन तो वहाँ तक पहुँच ही नहीं पाता है। वे ब्रह्म ही सभी के आदि स्वरूप व ज्ञान स्वरूप हैं। अतः सभी के आदि स्वरूप वाला होने के कारण वह सभी को पहले से ही जानते हैं। मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ, वायु व इन्द्र आदि देवता भी अपनी पूर्ण शक्ति से दौड़ लगाते रहते हैं परन्तु वह परब्रह्म परमेश्वर नित्य अचल रहते हुए भी उन सभी को पार करके आगे चले जाते हैं। वे अन्य देवता वहाँ तक पहुँच ही नहीं पाते हैं बल्कि इन्द्र, वायु आदि देवताओं में जो भी शक्ति है, जिसके माध्यम से वे जलवर्षण, प्रकाशन आदि क्रियाकलापों को सम्पन्न करते हैं, वह उस परब्रह्म परमेश्वर की शक्ति का एक अंशमात्र ही है। अतः उस परब्रह्म परमेश्वर की कृपा से ही अन्य इन्द्रादि देवता अपने–अपने कार्यों को सम्पन्न करने में समर्थ हैं।[8]

स्थिर व अस्थिर ब्रह्म – यह परब्रह्म परमेश्वर स्थिर व अस्थिर दोनों स्वरूप वाला है अर्थात् वह परब्रह्म परमेश्वर चल भी है और अचल भी है।[9] अतः एक ही समय में परस्पर विरोधी भाव,

---

7 ओम् पूर्णमदः पूर्णामिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।। शान्ति पाठ, ई0उ0

8 अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा आप्नुवत् पूर्वमर्षत्।
तद्धावतोअन्यानत्येति तिष्ठत्तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति।। वही0, 4

9 तदेजति तन्नैजति तद् दूरे तद्वन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य ब्राह्यतः।। वही0, 5

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

गुण व क्रिया जिसमें विद्यमान है, वे ही तो परमेश्वर हैं। यह सब उस परब्रह्म परमेश्वर की शक्ति की ही महिमा है। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि वह परब्रह्म परमेश्वर अपने दिव्यधाम में और संसाररूपी लीलाधाम में अपने भक्तजनों को सुख देने के लिए साकार रूप में प्रकट रहकर लीला करते हैं, यह उस परब्रह्म का चलना ही है और निर्गुण रूप में जो अचल स्थित है, यही उन परब्रह्म परमेश्वर का चलना नहीं है। इसी तरह से वह परब्रह्म परमेश्वर श्रद्धा व प्रेम से रहित मनुष्यों को कभी भी दर्शन नहीं देते हैं, इसीलिए वह उनके लिए दूर हैं और मनुष्य श्रद्धा व प्रेम के साथ उस ब्रह्म की उपासना करते हैं, वह उसी क्षण प्रकट हो जाते हैं, उनके लिए वे समीप ही हैं। कोई ऐसा भी स्थान नहीं है जहाँ वे ब्रह्म विद्यमान न हों अर्थात् वह परब्रह्म परमेश्वर बाहर–भीतर सभी जगह विद्यमान हैं।

इस उपनिषद् में ब्रह्मज्ञान का महत्त्व बताते हुए कहा है कि जब मनुष्य प्राणियों को परमात्मा में देखता है और सर्वान्तर्यामी परब्रह्म परमेश्वर को प्राणिमात्र में देखता है, उसी अवस्था में वह किसी से घृणा नहीं करता है।[10] वह मनुष्य उस परब्रह्म परमेश्वर की कृपा से संसार के बन्धनों से मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म का स्वरूप

ब्रह्म के दो रूप – बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म के दो स्वरूपों का वर्णन किया गया है – व्यक्त और अव्यक्त अर्थात् सगुण ब्रह्म व निर्गुण ब्रह्म। इस उपनिषद् में सगुण ब्रह्म को मूर्त व निर्गुण ब्रह्म को अमूर्त कहा गया है। ब्रह्म के दो रूपों में मर्त्य व अमृत स्थित और यत् तथा सत् व व्यत् का कथन मिलता है।[11]

---

[10] यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्येवासु पश्यति।
सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते।। वही0, 6

[11] द्वे वाव ब्रह्मणो रूपे मूर्तं चैवामूर्तं च मर्त्य चामृतं च स्थितं च यच्च सच्च त्यच्च।
ब0उ0, 2.3.1

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

तैत्तिरीयोपनिषद् में कहा गया है कि उस परब्रह्म परमेश्वर से ही समस्त भूतों की उत्पत्ति होती है और उत्पन्न होने के बाद उस ब्रह्म के आश्रय में ही लय को प्राप्त करते हैं और प्रलयकाल में उसी में प्रविष्ट हो जाते हैं।[12]

बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है कि जिस प्रकार से मकड़ी की नाभि से जाला व अग्नि से चिन्गारियाँ उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार से सभी इन्द्रियाँ देव व समस्त भूत उसी आत्मा से ही उत्पन्न होते हैं।[13]

मुण्डकोपनिषद् में भी ब्रह्म से समस्त संसार की उत्पत्ति बताई गई है जिस प्रकार मकड़ी स्वयं जाले का निर्माण करती है और बाद में स्वयं ही उसे निगल जाती है और पृथ्वी से समस्त औषधियाँ उत्पन्न होती है। मनुष्य शरीर से केश व रोएं उत्पन्न होते हैं उसी प्रकार से उस अक्षर ब्रह्म से ही सम्पूर्ण विश्व उत्पन्न होता है।[14] इस प्रकार वह ब्रह्म ही संसार की उत्पत्ति, पालन व संहार करने में समर्थ हैं। ये सब विशेषताएँ उस परब्रह्म के सगुण रूप की व्याख्या करती है।

निर्गुण ब्रह्म की व्याख्या किसी चिन्ह व गुण से नहीं की जा सकती है क्योंकि वह निर्गुण ब्रह्म कार्यकारण व जगत् के विकारों से सर्वथा परे है। बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म के अमूर्त रूप के सम्बन्ध में नेति–नेति आदेश दिया गया है अर्थात् उस परब्रह्म परमात्मा का नेति–नेति शब्द से उपदेश किया गया है क्योंकि उससे बढ़कर अन्य कोई आदेश नहीं है उस ब्रह्म से बढ़कर अन्य कोई देव नहीं है।[15]

बृहदारण्यक उपनिषद् के चतुर्थ अध्याय में जनक याज्ञवल्क्य को कहते हैं कि शैलिनि जित्वा ने वाक् को ही ब्रह्म कहा है। शुल्वपुत्र उदंग ने कहा है कि प्राण ही ब्रह्म है। वर्कु वार्ष्णि ने

---

12 यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति।
यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति। तद्विजिज्ञासास्व तद् ब्रह्मेति। तै0उ0, 3.1

13 स होवाचाजातशत्रुर्यत्रैष..... ग्रहीतं मनः। बृ0उ0, 2.1.20

14 यथोर्णनाभिः सृजते ग्रह्णते च यथा पृथिव्यामोषधयः संभवन्ति।
यथा सतः पुरुषात्केशलोमानि तथाक्षरात्संभवतीह विश्वम्।। मु0उ0, 1.1.7

15 अथात आदेशो नेति नेति न ह्येतस्मदिति नेत्यन्यत्परमस्त्यथ नामधेयंसत्यस्य सत्यमिति प्राणा वै सत्यं तेषामेव सत्यम्। बृ0उ0, 2.3.6

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

कहा है कि चक्षु ही ब्रह्म है। भारद्वाज गोत्रीय गर्दभी ने श्रोत्र को ही ब्रह्म कहा है। सत्यकाम जावाल ने मन को ही ब्रह्म कहा है और विदग्ध शाकल्य ने हृदय को ही ब्रह्म कहा है।

याज्ञवल्क्य इन सबको ब्रह्म नहीं मानते हैं इसके लिए वे नेति–नेति का वर्णन करते हैं अर्थात् वह ब्रह्म अन्तरहित, ग्रहण न किए जाने वाला है, नष्ट न होने वाला है, असंग है, बन्धनों से रहित है, वह कभी भी दुःखी नहीं होता है।[16]

इस प्रकार वह ब्रह्म अनिर्वचनीय है अर्थात् वह सभी वर्णनों से परे है क्योंकि वह निर्गुण व निराकार है। इसीलिए ब्रह्म का उपदेश नेति–नेति वाक्य से होता है।

अन्तर्यामी ब्रह्म – बृहदारण्यक उपनिषद् में ब्रह्म को अन्तर्यामी कहा गया है। इस उपनिषद् में आरूणि उद्दालक याज्ञवल्क्य से अन्तर्यामी के विषय में पूछते हैं कि वह अन्तर्यामी कौन है? तब याज्ञवल्क्य कहते हैं कि वह ब्रह्म ही अन्तर्यामी है। जो पृथ्वी के बाहर व अन्दन विद्यमान है। वह ब्रह्म का अन्तर्यामी स्वरूप ही है। उस अन्तर्यामी ब्रह्म को पृथ्वी भी नहीं जानती है कि उसके अन्दर भी अन्य कोई रहता है। पृथ्वी ही जिसका शरीर है अर्थात् जो पृथ्वी का शरीर है, वही उसका शरीर है। वह ब्रह्म ही बाहर व भीतर रहकर पृथ्वी को अपने कार्य व्यापार में जगाकर यथावत् शासन करता है। जो मृत्युरहित अर्थात् निर्विकार है और जो सबका आत्मा परमात्मा है, यही वह अन्तर्यामी है।[17]

इस प्रकार वह ब्रह्म जल में, अग्नि, अन्तरिक्ष, वायु, द्युलोक, आदित्य, दिशाओं, चन्द्रमा, तारों व आकाशादि में रहकर समस्त भूतों के अन्दर विद्यमान हैं। उस अन्तर्यामी को प्राणी नहीं जानते हैं। जिसका शरीर समस्त भूत है और जो सभी भूतों में विद्यमान होकर सब भूतों को नियम में रखता है, वह सभी का आत्मा अन्तर्यामी व अमर है।[18]

---

16 ए एष नेति..... न व्यथते। वही0, 4.2.4

17 य पृथिव्यां तिष्ठन्पृथिव्या अन्तरो यं पृथिवी न वे यस्य पृथिवी शरीरं य पृथिवीमन्तरो यमयत्येव त आत्माइन्तर्याम्यमृतः। बृ0उ0, 3.7.3

18 यः सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्सर्वेभ्यो भूतेभ्योअन्तरो यं सर्वाणि भूतानि न विदुर्यस्य सर्वाणि भूतानि शरीरं यः सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयत्येष त आत्मान्तर्याम्यमृत। वही0, 3.7.4

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

इसी प्रकार वह अन्तर्यामी ब्रह्म प्राण, वाणी, चक्षु, श्रोत्र, मन, त्वचा व विज्ञान के अन्दर विद्यमान हैं और जो रेत में विद्यमान होकर भी रेत से बाहर है। समस्त जगत् का एक नाम रेता है और उसमें रहने वाले अन्तर्यामी हैं जो अन्दर व बाहर विद्यमान रहकर सम्पूर्ण संसार को–स्व–व्यापार में स्थित रखता है। वह अन्तर्यामी ब्रह्म सभी को देखने वाला है परन्तु उस अन्तर्यामी को कोई भी नहीं देख सकता है। उस ब्रह्म को सुना नहीं जाता है, परन्तु वह सभी की सुनता है। वह मनन नहीं किया जा सकता है परन्तु वह सबका मनन करता है। जो जाना नहीं जा सकता है परन्तु वह सभी को जानता है।[19] उस अन्तर्यामी के अतिरिक्त अन्य कोई द्रष्टा, श्रोता, मनन करने वाला व जानने वाला नहीं है। वही अन्तर्यामी है और उस अन्तर्यामी से भिन्न सब नश्वर व दुःखग्रस्त है।

कठोपनिषद् में भी अन्तर्यामी ब्रह्म के विषय में बताया गया है कि जिस प्रकार एक ही प्रकार की अग्नि लोक लोकान्तरों में व्याप्त होकर प्रत्येक पदार्थ में उसी के रूप में स्थित हो जाती है उसी प्रकार एक वह अन्तर्यामी परब्रह्म समस्त पदार्थों में व्याप्त होकर भिन्न–भिन्न रूपों वाला प्रतीत होता है परन्तु वास्तव में वह एक ही है। वही सबके बाहर व भीतर विद्यमान है।[20]

विराट्–स्वरूप ब्रह्म – बृहदारण्यक उपनिषद् में ब्रह्म को अश्व के समान विराट कहा गया है। इस अश्वरूपी परब्रह्म परमात्मा के ब्रह्म मुहूर्तकाल सिर हैं, सूर्य नेत्र है, वायु प्राण है, वैश्वानर अग्नि खुला हुआ मुख है, संवत्सर ही देह (आत्मा) है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड या प्रकृति का नाम भी अश्व है। जिस प्रकार अश्व मनुष्यों के लिए उत्तम वाहन है तथा मनुष्य को अपनी पीठ पर लादकर बड़े जोर से दौड़ता है, उसी प्रकार ब्रह्म भी जीवात्मा व अन्य पदार्थों का एक उत्तम वाहन है और अश्व के समान बड़े वेग से सब पदार्थों को लादकर चलता है।[21] जो बहुत व्यापक होता है

---

19 यो रेतसि तिष्ठन् रेतसो अन्तरो अयं रेतो न वेद यस्य रेतः शरीरं यो..... अन्यदार्त।
बृ0उ0, 3.7.16–23

20 वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च।। क0उ0, 2.2.9

21 उषा वा अश्वस्य मेध्यस्य शिरः। सूर्य चक्षुर्वातः।
प्राणोव्यात्तमग्निर्वैश्वानरः संवत्सरः आत्मा अश्वस्य–मेध्यस्य। बृह0उप0, 1.1.1

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उसे अश्व कहते हैं इसीलिए ब्रह्म की व्यापकता बहुत बड़ी है। इसकी उपेक्षा संसार की व्यापकता न्यून है इसीलिए इसको अश्व कहा है।

इसी तरह इस अश्व रूपी परब्रह्म के विराट रूप के बारे में कहा गया है कि अश्व रूपी परब्रह्म का द्युलोक पृष्ठ भाग (ऊपरी या अव्यक्त भाग) है, अन्तरिक्ष लोक उस ब्रह्म का उदर है, पृथ्वी पाद रखने का स्थान है, पूर्व आदि दिशाएँ पार्श्व भाग हैं, बीच की दिशाएँ पसलियाँ हैं, ऋतुएँ अन्य अंग स्थान हैं, महीन व पक्ष सन्धि का स्थल है, दिन–रात दोनों चरण हैं, नक्षत्र का समूह उसकी अस्थियाँ हैं, आकाश शरीर में विद्यमान मांस है, बालू रेत चबाए हुए अन्न हैं। नदियाँ उसकी नाड़ी का समूह है, पर्वतों का समूह यकृत है। औषधियाँ व वनस्पतियाँ लोम का समूह है, उदय होता हुआ सूर्य नाभि से ऊपर का स्थान है तथा ढलता हुआ सूर्य कमर के नीचे का भाग है। उस अश्वरूपी परब्रह्म का जभांई लेना बिजली के चमकना जैसा है, उसका अँगड़ाई लेना मेघों के गरजने के समान है। उसका मूत्र–त्याग ही जल वर्षा के समान हैं। इसीलिए यह अश्वरूपी ब्रह्म ही विराट स्वरूप वाला है।[22]

मुण्डकोपनिषद् में भी ब्रह्म के विराट स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा गया है कि यह अग्नि ही उस ब्रह्म का मुख है, चन्द्र व सूर्य उस ब्रह्म की आँखे हैं, दिशाएँ व ऋग्वेद आदि ग्रंथ उसके कान हैं, वायु उसका प्राण है, यह सम्पूर्ण विश्व उस ब्रह्म का हृदय है, पृथ्वी पादस्थान है, ऋग्वेद आधी खुली हुई वाणी है। वास्तव में वह ब्रह्म सबकी आत्माओं में विराजमान है तथा सबका अन्तरात्मा है।[23]

अक्षर–ब्रह्म –बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म को अक्षर भी कहा गया है अक्षर का अभिप्राय है कि जिसके गुण, कर्म व स्वभाव कभी भी न बदले। इस अक्षर ब्रह्म के अनेक विशेषण बताए गए हैं कि यह अक्षर–ब्रह्म ना तो मोटा है, ना ही पतला है, ना तो छोटा है ना ही लम्बा है, ना ही चिकना है, ना ही छाया है, ना ही अन्धकार है। ना वायु है, ना ही आकाश है, जो संग रहित है,

---

22 द्यौः पृष्टमन्तरिक्षमुदरं पृथिवी..... वाक्।। बृह0उ0, 1.1.1

23 अग्निर्मूर्धा चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ दिशाः श्रोत्रे वाग्विवृताश्च वेदाः।
वायुःप्राणो हृदयं विश्वमस्य पदभ्यां पृथिवी ह्योष सर्वभूतान्तरात्मा।। मुण्ड0उ0, 2.1.4

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

गंध रहित है। जिसके ना ही नेत्र हैं, ना ही कान, ना ही वाणी, ना मन, ना तेज, ना ही मुख है। वह ना तो भीतर है, ना ही बाहर है। वह अविनाशी ब्रह्म ना कुछ खाता है ना ही उसे कोई खा सकता है। वह तो एक अद्वितीय तत्त्व है।[24]

जिस प्रकार एक राजा के राज्य में विभिन्न मर्यादाएँ व नियम होते हैं जिसके अंदर रहकर सभी व्यवहार करते हैं। उसी प्रकार उस अक्षर ब्रह्म की आज्ञा से सूर्य व चन्द्रमा अपने अनुशासन में रहते हैं इसी ब्रह्म की आज्ञा से द्युलोक व पृथ्वी नियमित मर्यादा में रहकर स्थित है। इसी अक्षर की आज्ञा से निमेष, दिन–रात, मास, ऋतु व सवंत्सर आदि मर्यादित हैं। इसी अक्षर की आज्ञा से नदियाँ पर्वतों से निकलकर पूर्व व पश्चिम दिशा की ओर बहती हैं। इसी ब्रह्म की आज्ञा से मनुष्य दानी लोगों की प्रशंसा करते हैं। इसी ब्रह्म की आज्ञा से अग्नि, वायु आदि देवता यजमान के अनुकूल होते हैं और पितरगण देवों के अनुगत होते हैं।[25]

अभय–ब्रह्म –बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा गया है कि वह ब्रह्म अभय स्वरूप वाला है। वह ब्रह्म निश्चय ही अजर अमर अविनाशी होने के कारण अभय स्वरूप है। क्योंकि जो जन्म लेता है वही जीर्ण होता है, वही मरण भाव को प्राप्त होता है। परन्तु वह ब्रह्म तो उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय आदि और इससे उत्पन्न होने वाले मृत्यु, काम, कर्म व मोह आदि से भी रहित है इसी कारण से वह अभय है अर्थात् भय आदि से रहित है और जो इस प्रकार जान लेता है वह भी ब्रह्म के समान हो जाता है।[26]

कालातीत–ब्रह्म –बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म को कालातीत भी कहा गया है। अर्थात् रात–दिन अपने अवयवों के उपलक्षित संवत्सर रूप काल उस ब्रह्म के पीछे ही घूमता है अर्थात्

---

24 स्थूलमनणु अह्नरूवमदीर्घम लोहितमस्त्रेहमच्छायम् तमाअवायु अनाकाशम सड़.गमरसमगन्धमचक्षुष्क मश्रोत्रमवागमनोअते जस्कम प्राणममुखममात्रम्। अनन्तरमब्राह्यं न तदक्ष्नाति कश्चन। बृ0उ0, 3.8.8

25 एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठत एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने द्यावापृथित्यौ विधृते तिष्ठत एतस्य वा अक्षस्य प्रशासने निमेषा मुहूर्ता अहोरणाण्यर्धमासा ऋतवः सवंत्सरा इति विधृतास्तिष्ठन्त्येतस्य वः अक्षरस्य प्रशासने प्राच्योअन्या नद्यः स्यन्दन्ते श्वेतेश्यः पर्वतेभ्यः प्रतीच्योअन्या यां यां च दिशमन्वेतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने।

बृह0उ0, 3.8.9

26 भयं वै बृह्मामयं हि वै ब्रह्म भवति च एवं वेद। बृह0उप0, 4.25

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

उसी का अनुकरण करता है। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि आदि ज्योतियों की भी ज्योति है वह भी उस ब्रह्म के कारण ही है। इस सम्पूर्ण जगत् को आयु देने वाला भी वही ब्रह्म है वही मरण धर्म से रहित हैं। उसी परब्रह्म की विद्वानजन उपासना करते हैं।[27] वह ब्रह्म ही तीनों लोकों का ज्ञाता व त्रिकालदर्शी है, वही तीनों कालों का स्वामी है। जो मनुष्य उस तीनों कालों के ज्ञाता व त्रिकालदर्शी को जान लेता है तब वह किसी से भी घृणा व द्वेष नहीं रखता है।[28]

अधिष्ठाता–ब्रह्म –बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म को अधिष्ठाता कहा गया है।इसी ब्रह्म में पाँच प्रकार के मनुष्य अथवा पितर, देव, गन्धर्व, असुर व राक्षस और पंचजन अथवा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, क्षुद्र और ज्योति, प्राण, चक्षु, मन व आकाश श्रेष्ठ पंचभूत प्रतिष्ठित है। सब कुछ उस ब्रह्म में ही स्थित है।[29]

अप्रमेय–ब्रह्म –इस उपनिषद में ब्रह्म को अप्रमेय भी कहा गया है। अर्थात् यह ब्रह्म प्रमाण का विषय ही नहीं है। इसी कारण अप्रमेय है यह अद्वितीय है, यह पाप आदि कर्मों से शून्य है, यह आकाश से भी अधिक सूक्ष्म है। जन्म–रहित है, महान है तथा यह ब्रह्म अनश्वर है।[30]

सर्वज्ञ ब्रह्म – बृहदारण्यक उपनिषद् में ब्रह्म को सर्वज्ञ अर्थात् विशेष ज्ञान वाला बताया गया है। वह ब्रह्म सबको जानता है इसीलिए वह महान है व अमृत स्वरूप वाला है। यह सब प्राणियों को जानने वाला है। यह सब प्राणियों में विद्यमान ही नहीं है परन्तु सबको अपने नियन्त्रण में रखने वाला है और सभी का शासक व स्वामी भी है। यह शुभ कर्मों से बढ़ता नहीं है और न

---

27 यस्मादर्वाक्संवत्सराअहोभिः परिवर्तते।
तद्देवा ज्योतिषां ज्योतिरायुर्होपासते अमृतम्।।बृह0उप0, 4.416

28 ईशानं भूतभव्यस्य न ततो विजुगुप्सते। बृ0उप0, 4.4.15

29 यस्तिन्यन्च पन्चजना आकाश्च प्रतिष्ठितः।
तमेव मन्य आत्मानं विद्वान्ब्रह्मामृतोअमृतम्।। बृह0उ0, 4.4.17

30 एक धैवानुद्रष्ट व्यमेतद प्रमेयं ध्रुवम्।
विरजः पर आकाशादज आत्मा महान् ध्रुवः।। बृह0उ0, 4.4.20

31 स वा एष महानज योअयं विज्ञानमयः प्राणेषु य एषोअन्तर्हृदय आकाशस्तस्मिंछेते सर्वस्य वशी सर्वस्येशानः सर्वस्याधिपतिः स न साधुना कर्मणा भूयान्नो एवा साधुना कनीयानेष सर्वेश्वर एष भूताधिपतिरेव भूतपाल एष सेतुर्विधरण। स एष नेति नेत्यात्माअनुग्रह्यो नहि गृह्यतेऽशीर्थो नहि शीयतेऽसंगो सज्यतेऽसितो न व्यथते न रिष्यति। बृ0उ0, 4.4.22

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 3, March - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

ही बुरे कर्मों से घटता है। यह सभी प्राणियों का अधिपति, स्वामी व पालक है। यह सभी लोकों को विनाश से बचाने के लिए बाँध है। वह ब्रह्म पकड़ से परे है, उसे पकड़ा नहीं जा सकता है। वह अहिंसनीय है क्योंकि वह मारा नहीं जा सकता है। वह असंग है क्योंकि वह अनासक्त है, वह बन्धन से रहित है। वह दुःखी नहीं होता और न ही वह कभी नष्ट होता है।[31]

इस प्रकार बृहदारण्यकोपनिषद् में ब्रह्म को अन्तर्यामी, अक्षर, अभय, कालातीत, अधिष्ठाता, अप्रमेय, विराट स्वरूप, सर्वज्ञ व सभी पदार्थों का मूल कारण माना गया है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'वह ब्रह्म ही सृष्टिकर्त्ता है। संसार की उत्पत्ति का निमित्तकारण है। उस ब्रह्म की सत्ता से ही सभी प्राणी उत्पन्न होते हैं तथा उसकी सत्ता से ही सभी प्राणी जीवित रहते हैं। वह ब्रह्म सम्पूर्ण संसार की रचना करता हुआ स्वयं सर्वथा उससे अलग है। वह शुद्ध व चिरन्तन ब्रह्म है। वह अमृतस्वरूप व अविनाशी है। सभी लोक लोकान्तर उसी के आश्रय में रहकर स्थित रहते हैं, क्योंकि वह ब्रह्म ही सभी का कारणस्वरूप है, कोई भी उसका अतिक्रमण नहीं कर सकता।